Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
May 2024 5(5), 947–951

DEPICTION OF LEGAL REALITY IN INDIAN JUDICIAL SYSTEM IN HINDI LITERATURE

हिन्दी साहित्य में भारतीय न्यायतंत्र में कानूनी यथार्थ का निरूपण

Dr. Om Mishra [1]

[1] Dr. Bhimrao Ambedkar College, Faculty of Arts, Hindi/Journalism Department, University of Delhi, Delhi

ABSTRACT

English: Dard-e-Dakhila As the name suggests, injustice was done to a person in admission to the university. The university administration includes professors, department heads, deans, campus deans, examination department, registrar, vice chancellor, all. On the other hand, in judicial administration, judges of the High Court, Supreme Court and lawyers, who are officers of the court, all have appeared with their basic characters. The real satire on the condition of Indian universities is visible in the following lines- "Is this a system? Is it right to call it a system? Is it not the responsibility of the college or the department head to immediately send such information to the concerned department of the university? Is it not the responsibility of the examination department to contact the concerned college or department itself and find out what happened to the supplementary of a certain student? Without passing the supplementary, within the prescribed period, will any college accept the fee of a student? Will any department allow him to join the class? Will any college issue him a roll number, not once, but thrice, to appear in the second, third and final session examination? Will any college release the mark sheet to a student just like that, without fully satisfying itself? And many such questions had raised the trumpet of a tremendous rebellion within justice against the system. In the midst of this rebellion, he reached home.'1.

Hindi: 'दर्द-ए-दाखिला' उपन्यास में निरूपित प्रशासन व्यवस्था एवं न्यायतंत्र प्रशासन व्यवस्था दर्द-ए-दाखिला जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि किसी व्यक्ति के साथ विश्वविद्यालय में प्रवेश में अन्याय किया। विश्वविद्यालयी प्रशासन में प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष, संकायाध्यक्ष, परिसर संकायाध्यक्ष, परीक्षा विभाग, कुल सचिव, कुलपति सभी सम्मिलित हैं। दूसरी तरफ न्यायालयी प्रशासन में उच्चन्यायालय, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश व वकील जो कि न्यायलय के अफसर सभी अपने मूलभूत चरित्र के साथ उपस्थित हुए हैं। भारतीय विश्वविद्यालयों के हालत पर यथार्थ व्यंग्य निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है-''यह कोई व्यवस्था है? क्या इसे व्यवस्था की संज्ञा देना उचित हैं? क्या कॉलेज अथवा विभागाध्यक्ष की जिम्मेदारी नहीं है कि वह इस प्रकार की सूचना विश्वविद्यालय के संबंधी विभाग को तुरन्त भिजवाए? क्या परीक्षा विभाग-''यह दायित्व नहीं है कि वह सम्बन्धित कॉलेज या विभाग से स्वयं संपर्क करे और पता करे कि अमूक विद्यार्थी की 'सप्लीमेंट्री' का क्या हुआ? बिना 'सप्लीमेंट्री' पास किये, निर्धारित अवधि के अंदर, क्या कोई कॉलेज किसी विद्यार्थी की फीस स्वीकार करेगा? क्या कोई विभाग उसे कक्षा में दाखिल होने देगा? क्या कोई कॉलेज उसे रोल नंबर जारी करेगा, एक बार नहीं, तीन बार, दूसरे, तीसरे और अंतिम सत्र की परीक्षा में बैठने के लिए? क्या कोई कॉलेज वैसे ही किसी विद्यार्थी को अंकपत्र रिलीज कर देगा, बिना स्वयं को पूर्णतः संतुष्ट किए? वगैरा अनेक प्रष्नों ने व्यवस्था के विरुद्ध इंसाफ के भीतर जबरदस्त विद्रोह का बिगुल बजा रखा था। इसी विद्रोह के बीच, वह घर पहुँचा।''1

DOI
10.29121/shodhkosh.v5.i5.2024.4760

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2024 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

1. प्रस्तावना

'दर्द-ए-दाखिला' उपन्यास में निरूपित प्रशासन व्यवस्था एवं न्यायतंत्र प्रशासन व्यवस्था

दर्द-ए-दाखिला जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि किसी व्यक्ति के साथ विश्वविद्यालय में प्रवेश में अन्याय किया। विश्वविद्यालयी प्रशासन में प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष, संकायाध्यक्ष, परिसर संकायाध्यक्ष, परीक्षा विभाग, कुल सचिव, कुलपति सभी सम्मिलित हैं। दूसरी तरफ न्यायालयी प्रशासन में उच्चन्यायालय, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश व वकील जो कि न्यायलय के अफसर सभी अपने मूलभूत चरित्र के साथ उपस्थित हुए हैं। भारतीय विश्वविद्यालयों के हालत पर यथार्थ व्यंग्य निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य है-''यह कोई व्यवस्था है? क्या इसे व्यवस्था की संज्ञा देना उचित हैं? क्या कॉलेज अथवा विभागाध्यक्ष की जिम्मेदारी नहीं है कि वह इस प्रकार की सूचना विश्वविद्यालय के संबंधी विभाग को तुरन्त भिजवाए? क्या परीक्षा विभाग-''यह दायित्व नहीं है कि वह सम्बन्धित कॉलेज या विभाग से स्वयं संपर्क करे और पता करे कि अमूक विद्यार्थी की 'सप्लीमेंट्री' का क्या हुआ? बिना 'सप्लीमेंट्री' पास किये, निर्धारित अवधि के अंदर, क्या कोई कॉलेज किसी विद्यार्थी की फीस स्वीकार करेगा? क्या कोई विभाग उसे कक्षा में दाखिल होने देगा? क्या कोई कॉलेज उसे रोल नंबर जारी करेगा, एक बार नहीं, तीन बार, दूसरे, तीसरे और अंतिम सत्र की परीक्षा में बैठने के लिए? क्या कोई कॉलेज वैसे ही किसी विद्यार्थी को अंकपत्र रिलीज कर देगा, बिना स्वयं को पूर्णतः संतुष्ट किए? वगैरा अनेक प्रष्नों ने व्यवस्था के विरुद्ध इंसाफ के भीतर जबरदस्त विद्रोह का बिगुल बजा रखा था। इसी विद्रोह के बीच, वह घर पहुँचा।''1

किस प्रकार विश्वविद्यालय प्रशासन एम.फिल. व पी-एच.डी. की प्रवेश परीक्षा कैसे धांधली करता है जो इंसाफ के द्वारा कुलपति को लिखे पत्र से स्पष्ट है-''अगस्त 29 के दिन, उसने उप कुलपति के नाम एक पत्र लिखा। उसने इस पत्र में लिखा-

मुझे मालूम पड़ा है कि प्रत्येक वर्श एम.फिल. (गणित) कोर्स में प्रवेश लेने के लिए नियम निर्धारित किए जाते है, प्रार्थना-पत्रों एवं रिक्त स्थानों की संख्याओं को ध्यान में रखते हुए। कथित रिक्त स्थानों की संख्या भी प्रत्येक वर्श घटती-बढ़ती रहती है।

उसने पत्र में पिछले कुछ वर्षों में निर्धारित शैक्षिक योग्यता सम्बन्धी नियमों का भी उल्लेख किया, यह स्पष्ट करने के लिए कि एम.फिल. कोर्स में कथित नियमों के अनुसार, ऐसे उम्मीदवारों को प्रवेश दिया जाता रहा है जिनके एम.ए. एवं बी.ए. में, तुलनात्मक दृष्टि से अच्छे अंक नहीं होते थे। और, ऐसे प्रार्थियों को प्रवेश नहीं दिया जाता रहा है जिनके एम.ए. और बी.ए. अच्छे अंक होते थे। उसने उपकुलपति का ध्यान विशेषतः इस बात की ओर आकर्षित किया कि जहाँ एम.फिल. कोर्स में प्रवेश देने के लिए प्रार्थी की एम.ए. और बी.ए. में शैक्षिक योग्यताओं को ध्यान में रखना समझ में आता था, वहाँ उनकी हायर सेकेण्डरी में शैक्षिक योग्यताओं को महत्व देना एकदम अनुचित था, विशेषकर तब जब पी. एच.डी. में प्रवेश पाने के लिए प्रार्थी के केवल एम.ए. और बी.ए. में प्राप्त अंक देखे जाते थे।''2

इसी प्रकार का वर्णन निम्न पंक्तियों में भी किया गया है-''सितम्बर नौ के दिन, आनन्द स्वरूप ने इंसाफ को कचहरी में टेलीफोन पर सम्पर्क किया, 'इंसाफ साहेब, विभाग के बाहर नोटिस बोर्ड पर एम.फिल. कोर्स में प्रवेश पाने वाले उम्मीदवारों की सूची लग गयी है। इसमें तेरह उम्मीदवारों के नाम हैं। भईया, यदि चाहो तो आकर देख लो। बाकी कुछ होने-वाने वाला नहीं है।''3

न्याय-व्यवस्था

'दर्द-ए-दाखिला' उपन्यास भारतीय न्याय व्यवस्था की खामिओं को उजागर करता जीवन्त उपन्यास है। न्याय तंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार का निरूपण उपन्यास में बहुत सरलता से यथार्थपूर्वक किया गया है। न्यायालयों के कर्मचारी कभी-कभी बिना ड्यूटी निवाहे किसी मुकदमें की फाइल नियत तिथि पर जज को टेबिल तक पहुँचाना भूल जाते हैं जो उनकी आदत सी बन गई है। इर चैथे दिन न्यायाधीश बदलते रहते हैं -''अगले दिन, न्यायमूर्ति गुप्ता अवकाश पर थे। उनके स्थान पर न्यायमूर्ति श्री अरूण गोविल को खंडपीठ में बैठना पड़ा। इंसाफ ने न्यायालय के सम्मुख पेश होने वाले मुकदमों पर नजर डाली। उसमें ममता। मुकदमा नदारत था। इसलिए, मुकदमें की फाइल को न्यायमूर्ति गोविल।। घर पहुँचने का प्रश्न नहीं था। जब फाइल घर नहीं पहुँची, तो उस न्यायमूर्ति गोविल द्वारा पढ़ने का प्रश्न ही नहीं उठता था। इंसाफ एकद। हक्का-बक्का रह गया। उसके होश-हवास हवा हो गए।''4

किस प्रकार न्यायालय की कार्यवाहियाँ चलती हैं बिना सुने ही अगली तारीख व आदेश के लिए जाते है-''इंसाफ तुरन्त उस विभाग में पहुँचा जहाँ मुकदमों की सूची तैयार होती थी। कमरे में सन्नाटा थाने पहेलन दो-तीन व्यक्तियों के अलावा, वहाँ कोई नहीं था। इन व्यक्तियों के पद युवा महिला थी। इंसाफ ने उससे संपर्क किया, अपनी समस्या से अवगत करायाँ महिला के पूछने पर, उसने मुकदमें और खंडपीठ का नाम बताया। महिला ने उसकी सहायता करने में असमर्थता प्रकट कर दी। बाद में, एक साधारण कागज पर लिखे कुछ मुकदमों के नम्बर पढ़ने के बाद, उसने कहा, 'आपका केस कोर्ट में सुनवायी के लिए भेज दिया जायेगा। कल यह फाइल कोर्ट से विभाग में नहीं आयी थी। बस, इसीलिए रह गयी थी। आज भेज देंगे।''5

किस प्रकार न्यायालय स्वयं तो गलत सही देखना ही नहीं चाहते-''विश्वविद्यालय के वकील महोदय को सुनने के पश्चात्, न्यायमूर्ति गुप्ता ने इंसाफ की ओर देखते हुए टिप्पणी की, 'मैंने मुकदमा समझ लिया है। चूंकि प्रार्थी एम.फिल. कमेटी द्वारा निर्धारित नियमों को पूरा नहीं करता है, इसलिए उसका प्रवेश नहीं हुआ है।' और न्यायमूर्ति महोदय ने आदेश लिखवाना शुरू किया।

इंसाफ उठ खड़ा हुआ। उसने तनिक उत्तेजित मुद्रा में कहा, 'युआर लार्डशिप विश्वविद्यालय ने मेरी प्रार्थना पर कोई गौर नहीं फरमाया है। कम-से-कम आप तो मुझे सुनने की कृपा करें। इसके बाद, उसने तथ्यों एवं तर्कों को संक्षेप में न्यायमूर्ति महोदय के सामने फिर प्रस्तुत किया। न्यायमूर्ति गुप्ता मन-ही-मन निर्णय ले चुके थे। उन्होंने अपना निर्णय लिखवाना आरम्भ किया।''

जस्टिस गुप्ता व गोयल ने पिटिषन रद्द कर दी-''इन परिस्थितियों में, हम प्रवेश में हस्तक्षेप नहीं करना चाहते और परिणामस्वरूप, पिटीशन रद्द करते हैं।'' जबकि न्यायालय के सारे वकीलों ने इस निर्णय पर आश्चर्य प्रकट किया तथा न्यायाधीशों द्वारा केस को बिगाड़ने की परम्परा पर यथार्थ रूप में लेखक ने लिखा है-''वहाँ भी क्या होना है। वहाँ एस.एल.पी. दायर हो सकती है। वहाँ तो एक प्रकार का जुआ है। लग गया तीर, नहीं तो तुक्का है। फिर खर्चा भी काफी होता है। कोई एडवोकेट-आन-रिकार्ड भी करना पड़ेगा। इसके अलावा, वहाँ जब तक कोई सीनियर वकील पेश नहीं होता, तो कोई

सुनता नहीं। सीनियर की तो थोड़ी बहुत सुन भी लेते हैं और अक्सर मान भी लेते हैं। इसलिए, वहाँ तो यहाँ से भी अधिक बुरा हाल है। यदि आपका कोई एडवोकेट-आन रिकार्ड जानने वाला हो, और थोड़े बहुत पैसे लेकर आपकी पिटिशन बना दे और दायर कर दे, तो बेशक बहस मैं कर दूँगा।' कश्मीरा सिंह ने इंसाफ को सुझाया।'' इसके बाद वे स्पेषल लीव पिटीशन दायर करने पर विचार करते हैं परन्तु स्पेशल लीव पिटीशन दायर करने के लिए एडवोकेट आन रिकार्ड होना जरूरी है। किस तरह वकील न्यायालय के ऑफीसर होते हुए भी अनैतिकता के आभास वाले केस ले लेते हैं-''उसूलन, वह कोर्ट का एक जिम्मेदार आफिसर है, वह कोई कबाड़ी नहीं है। मेरे विचार में, बार काउंसिल को ऐसे मामलों में वकीलों के विरुद्ध कुछ कार्रवाही करनी चाहिए। ऐसे वकीलों के वकालत करने के लाइसेंस तुरंत रद्द कर देने चाहिए।''6

न्यायालय तंत्र में कुछ ऐसे भी हीरे है जिनके कारण लोगों का न्याय तंत्र पर भरोसा है। इसी प्रकार न्यायमूर्ति, न्याय करने के लिए ईष्वर द्वारा भेजे गए कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति की तरह स्वयं को न्याय करने के लिए प्रस्तुत करते हैं। ऐसे ही एक न्यायमूर्ति गोविल का वर्णन उपन्यास में किया गया है-''मुझे न्यायमूर्ति गोविल ने बहुत प्रभावित किया है। उनसे मिलने की इच्छा है। यदि आप उनसे मेरी मुलाकात करने में सहायता कर सकें तोकृ। भई इंसाफ साहेब, मान गए आपकी पहचान को। बहुत ही सज्जन आदमी हैं। हमारे न्यायालय में सचमुच एक हीरा है।''7

न्याय व्यवस्था में वकील की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है उसे न्यायालय का एक अफसर होने के नाते उसे न्यायालय को सत्य से अवगत कराना उसका मुख्य कार्य है। जबकि आज न्यायालयों में कुछ वकील चाटुकारिता से कुछ अन्य तरीके से पाश्चात्य व्यवस्था प्रभाव ने वकालक को भी गंदा कर दिया है। भारतीय वकालत ज्ञान परम्परा को मार दिया गया। आजकल तो वकालत में सफलता के लिए कला के बजाय, कुछ और ही 'गुण' चाहिए। मसलन, दलाली, राजनीति, चमचेबाजी, चाटुकारिता आदि। वकालत में कानून का ज्ञान, चरित्र, सज्जनता, स्वाभिमान, नैतिकता आदि का कोई महत्व नहीं रह गया है। इसके अलावा उपन्यास के लेखक ने आज के भ्रष्ट न्यायालय तंत्र के सफल एक वकील के लक्षणों का वर्णन त्रिखा व इंसाफ के वार्तालाप में किया है कि सफल वकालत कला के क्या गुण आजकल के कम वकीलों में ही होते हैं। इसकी पहली कला कि एक वकील को हमेशा जज को सम्मानीय मानना चाहिए। चाहे उसने कितने भी असम्माननीय कार्य न किए हो। वकील की वकालत कला की प्रथम कुशलता न्यायाधीश की मानसिकता, मूड़ का ज्ञान करना है-'' 'क्या आप मुझे, संक्षेप में, वकालत की कला को बारे में बताने की कृपा करेंगे?' इंसाफ ने प्रश्न किया, और फिर पकौड़ों का आनंद लेने लग गया।''8

कभी जमाना था कि सरदार बल्लभभाई पटेल जैसे लोग थे जिन्होंने वकालत के नाम पर अपना एक नाम बनाय था। गरीबों के मुकदमें वे स्वयं ही लड़ लेते थे सुओ मोटो मुकदमा लड़ने वालों में सरदार बल्लभभाई पटेल का नाम था। महात्मा गांधी ने तो वकालत की पर गरीबों के लिए वे ऐसे मुकदमों को लड़ने से मनाकर देते थे जो उन्हें अपराध कृत्य पूर्ण लगते थे। परन्तु गांधी के बाद वकील कभी बदल गया। पाश्चात्य प्रभाव पड़ गया। अब इंसाफ वही बताने जा रहा था। सबसे पहले तो वकील के लिए किसी जज के सामने अपीयर होने से पूर्व उसकी मानसिकता के बारे में जानना जरूरी है। बिना जज और उसकी मानसिकता को जाने, वकील अपने मुवक्किलों के पक्ष में फैसले लेने में सफल नहीं हो सकता। असल में, एक वकील को किसी अपरिचित जज के सम्मुख पेश ही नहीं होना चाहिए। इसके लिए उसे जज द्वारा सुनाए गए फैसलों और किताबों को, यदि उसने कोई लिखी है, अवश्व पढ़नी चाहिए, उसके सम्मुख पेश होने से पूर्व।'' इसके अलावा दूसरी (स्किल) निपुणता यह होनी चाहिए-''दूसरे, वकील को सदा यह ध्यान में रखना चाहिए कि वह केवल एक वकील है, चाहे वह जितना मर्जी अकलमंद हो, उसके मुवक्किल का मुकदमा जितना मर्जी सही और मजबूत हो, और जितना मर्जी जज अयोग्य, बदजुबान, अथवा चरित्रहीन हो। कारण? ताकत उसकी कलम में है। इसलिए, किसी जज के सम्मुख पेश होते समय, वकील को सदैव जज में हाथ में कलम की ताकत को ध्यान में रखना चाहिए, न कि उसके दिलदिमाग की दरिद्रता को। उसे इस सत्य के बारे में सदा सवत रहना चाहिए। उसे स्वयं को केवल उस कलम में से स्याही के एक ड्राप तक सीमित बहना चाहिए, जिसके लिए मुवक्किल ने उसे फीस दी है।''9 तीसरे गुण का वर्णन करते हुए लेखक ने लिखा है-''तीसरे, वकील का जज से कभी भी किसी प्रकार का कोई टकराव नहीं होना चाहिए, न ही उसे उसके कहे अथवा किए का कोई विरोध करना चाहिए। वकील को पहले जज की विचारधारा, समझदारी और मूड के बहाव के संग तैरना चाहिए, और फिर उस बहाव को अपने उद्देश्य की दिशा में आहिस्ता-आहिस्ता मोड़ना चाहिए, बिना किसी अन्य बात की परवाह किए।''10 चैथी प्रवीणता का वर्णन करते हुए लेखक ने लिखा है-''इनके अलावा, वकील को जज की अपेक्षा सदा अपने को जूनियर और 'इनफीरियर' समझना चाहिए। उसे स्वयं को कभी भी जज से सीनियर नहीं समझना चाहिए, न उसके समान सोचने का साहस करना चाहिए, उसके सिर पर बैठने की तो बात ही मत कीजिए। कारण? वह सम्माननीय है, और जो सम्माननीय है, उसका सम्मान होना ही चाहिए। 'अग्रवाल साहेब बोले जा रहे थे, मानो कॉलेज में विद्यार्थियों को वकालत की कला के बारे में 'लेक्चर' दे रहे हों।'' वकील कितना भी होशियार भले न हो उसे स्वयं को हमेशा जज से कम होशियार ही समझना चाहिए अन्यथा वह एक अच्छा वकील नहीं बन सकता है। उसे हमेशा जज के सामने अपनी निम्नता ही व्यक्त करनी चाहिए यह आज की वकालत कला का प्रधान गुण है-अतः आज सभी न्यायालयों का प्रत्येक जज हमेशा सम्माननीय ही होता है-'' 'यदि कोई जज सम्माननीय नहीं है, मेरा मतलब है कि स्पष्टतः वह कोई गलत हरकत करता है, अथवा कोई गलत बात कहता है, जिसका मुकदमें से कुछ भी लेना-देना नहीं है, अथवा किसी अन्य प्रकार की ऐसी गुस्ताखी करता है या करती है जो उस मे अपेक्षित नहीं है, तब?' इंसाफ में पकौड़ों पर से ध्यान हटाने हुए, और अग्रवाल साहेब की आँखों में अपनी आखें डालते हुए और उनके 'लेक्चर' पर रोक लगाते हुए, जानना चाहा।''11

'नहीं, आप गलत हैं। प्रत्येक जज सम्माननीय होता है। जब तक वह जस्टिम की कुर्सी में विद्यमान रहता है, यह माना जाता है कि वह सदा सही होता है, न्यायपसंद है, ईमानदार है, और कानून और न्याय के प्रति पूर्णतः समर्पित है।' अग्रवाल साहेब ने इंसाफ को शांत किया।''12

उपन्यास में कानून की सैद्धान्तिकी जो आजकल भारतीय न्यायालयों में व्याप्त है का भी निरूपण लेखक ने किया है। कानून के कैसे-कैसे सिद्धान्त भारत में व्याप्त है-''यह बहुत आसान है। कानून के अंतर्गत, कई 'प्रिजम्पशन्स' होते हैं। इन 'प्रिजम्पशन्स' में कुछ बुनियादी किस्म के होते हैं। मसलन,

प्रत्येक व्यक्ति को कानून की जानकारी है, भले ही जिस भाषा में कानून लिखा हुआ है, उस भाषा का ज्ञान अधिकांश व्यक्तियों को नहीं है, अधिकांश लोग अनपढ़ हैं और कानून जानने के लिए अयोग्य हैं।''13

'सब बेकार, एकदम बकवास। मेरे प्रिय दोस्त आप मुझे क्षमा करेंगे यह कहने के लिए कि पढ़े-लिखे लोगों में भी, कितने लोगों को विधि का ज्ञान है, विधि-स्नातकों में भी, कितने लोगों को सही कानून की जानकारी है। इसके अलावा, क्या प्रत्येक कानून की जानकारी होना संभव है?' श्री त्रिखा उत्तेजित हो गए।

'इस सत्य के बावजूद, यह एक बुनियादी 'प्रिजम्पशन' है कि प्रत्येक व्यक्ति को कानून की जानकारी है। इसकी अज्ञानता कोई बहाना नहीं है। इसी प्रिजम्पशन पर हमारी समस्त न्यायप्रणाली का किला, महल अथवा खंडहर जो भी आप कहना चाहें, टिका हुआ है।' इसी प्रकार, यह भी एक प्रिजम्पशन हैं कि प्रत्येक जज, छोटा या बड़ा, 'आनरेबल' है। आप इस सत्य पर संदेह कर ही नहीं सकते हैं, और न ही कोई विवाद खड़ा कर सकते हैं। आपको ऐसा करने का कोई अधिकार ही नहीं है।'

लेखक ने जज के मूड़ के अध्ययन का एक उदाहरण भी दिया है-''असल में, दो बातों ने काम किया होगा। पहला, मेरे मुवक्किल की आयु ने, और दूसरे, जो अधिक महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली जान पड़ती है, जज महोदय के पिता उसके घर पर बीमार चल रहे थे। इसलिए, जज को मेरे मुवक्किल को जेल में होने वाले दुख-दर्दी का पूरा आभास था। खैर छोड़िये, मैं आपको एक और पते की बात बताता हूँ।''14

स्पेशल लीव पिटीशन की स्वीकारता व अस्वीकारता पर लेखक ने यथार्थ व्यंग्य किया है कि एस.एल.पी. के लिए जो याचिका डाली जायेगी उसको वाद विषय न्यायाधीश की आत्मा को झकझोरने वाला होना चाहिए तभी इस याचिका को डालने की अनुमति मिलती है तभी इसांफ ने कहा कि आत्मा वाले जज कम ही मिलते हैं-''यह सामान्य या साधारण अनुमति नहीं है, यह असामान्य और असाधारण अनुमति है। आपको इसे पाने के लिए कोई कानूनी अधिकार नहीं है। यह असामान्य इसलिए है कि यह अनुमति तभी दी जाती है, जब आपकी पिटिशन आनरेवल जज को अपील करे, और आपकी पिटिशन अपील करने का अर्थ है, उसकी आत्मा को अपील करना। इसलिए, आपको पिटिशन इस ढंग से तैयार करनी चाहिए और जज के सम्मुख तर्क इस ढंग से प्रस्तुत करने चाहिए ताकि आपकी प्रार्थना जज की आत्मा को अपील करे। केवल तभी जज आपको अपील करने की अनुमति देगा, अन्यथा नहीं। यदि यह जज को, मेरा मतलब है उसकी आत्मा को अपील नहीं करती है, तब आपको उसकी अनुमति पाने का कोई अधिकार नहीं है। 'परन्तु, क्या प्रत्येक जज में आत्मा का होना आवश्यक है?' इंसाफ ने और कुरेदना चाहा।''15

यहाँ स्पेशल लीव पिटिशन के यथार्थ पर भी लेखक ने करारा व्यंग्य किया है-''इस प्रकार उपन्यास में न्यायतंत्र, विश्वविद्यालयी शिक्षा आदि का यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया गया है। अतः 'दर्द-ए-दाखिला' में चित्रित भारत के न्यायतंत्र की वास्तविक स्थिति समूचे देश के न्यायतंत्र के यथार्थ को प्रतीकित करती है।''

'जद्दोजहद' उपन्यास डॉ ओममिश्र द्वारा लिखित उपन्यास है। इस उपन्यास में भी लेखक ने न्यायतंत्र में व्याप्त यथार्थ का निरूपण किया है उसने दिव्यांग नाम के युवक के माध्यम से उसकी एक प्रोफेसर बनने की जद्दोजहद का वर्णन किया है। कैसे विकलांग न्यायालय, उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय की खामियों व यथार्थ पर भी रचना में व्यंग्य किया गया है। किस प्रकार विश्वविद्यालय प्रषासन अपनी मनमानी, कानून को ताखपर रखकर करते हैं। सरकार द्वारा लागू विकलांग आरक्षण (5») को वे मनमाने ढंग से लागू करने की जुगाड़ अपनाते हैं जिन विषयों में दृष्टि विकलांग अभ्यर्थी ज्यादा हैं उन विषयों को सामान्य अभ्यर्थियों से भर रहे हैं। जिन विषयों में दृष्टि विकलांग अभ्यर्थी नहीं मिल रहे हैं उन विषयों में दृष्टि विकलांगों को आरक्षण देकर विज्ञापन निकाल रहे हैं। यदि भारतीय शिक्षा व्यवस्था की दृष्टि विकलांगों के लिए सुगमता पर बात करें तो कहीं आज भी सुगम्य डिजिटल व ब्रेल पुस्तकें हिन्दी व अन्य भारतीय मातृ भाषाओं में उपलब्ध नहीं है। इसके अलावा अंग्रेजी में उपलब्ध सामग्री को ज्यादा तर दृष्टि विकलांग नहीं पढ़ पाते क्योंकि उनकी प्राथमिक शिक्षा मातृ भाषा में होती है। इसके अलावा जो शिक्षक इन्हें उच्च शिक्षा में पढ़ाते है वे प्रशिक्षित नहीं है तभी दृष्टि विकलांग मानविकीय विषय ज्यादा पढ़ते हैं। इसके अलावा कुछ केन्द्रीय विश्वविद्यालय अपने विज्ञापनों में लिख देते है कि ''यदि किसी भी विषय में निर्धारित योग्यताओं के वावजूद यदि दृष्टि विकलांग अभ्यर्थी अन्यथा उत्तीर्ण पाया गया तो विकलांगों के लिए सरकार द्वारा जारी राजाज्ञा में निर्धारित आरक्षण को लागू करने के लिए उन्हें नियुक्ति दी जायेगी परन्तु अभी तक केन्द्रीय विश्वविद्यालय मेजोरम, मनिपुर, साउथ विहार, केन्द्रीय विश्वविद्यालय हरियाणा, केन्द्रीय विश्वविद्यालय राजस्थान, केन्द्रीय विश्वविद्यालय जम्बू, केन्द्रीय विश्वविद्यालय काश्मीर, केन्द्रीय विश्वविद्यालय हरियाणा, केन्द्रीय विश्वविद्यालय हिमाचल प्रदेश, बाबा साहेब केन्द्रीय विश्वविद्यालय लखनऊ आदि में अभी भी एसोसिएट प्रोफेसर व प्रोफेसर के पदों पर दृष्टिविकलांग अभ्यर्थिओं को आरक्षण प्रदान नहीं किया गया है। जबकि दृष्टि विकलांगों ने इस सन्दर्भ में कई बार प्रार्थना पत्र दिया परन्तु प्रशासन के सिर में जूँ नहीं रेंगा। केन्द्रीय विश्वविद्यालय मनिपुर में तो एक नयी कानूनी जुगाड़ भिड़ाई गई-''वह यह कि वहाँ सारे पद भर लिए गए ताकि जब वैकन्सी ही रिक्त न होंगी तो दृष्टि विकलांगों को नियुक्ति देेने का मतलब ही खत्म है।'' उपन्यास में दिव्यांग को उनके एक वकील मित्र ने बताया कि 'इसी प्रकार अन्य केन्द्रीय विश्वविद्यालय भी ऐसा ही करने के लिए जुगाड़ करते हैं तथा उनके लिए आरक्षित पदों पर अपने चहेतों की नियुक्ति कर लेते हैं।

उपन्यास में मानविकी में ज्यादा उच्च शिक्षित दृष्टि विकलांगों की संख्या क्यों है इसके कारणों का भी निणुपण किया गया है। अभी भी दृष्टि विकलांगों को गणित, विज्ञान, मनोविज्ञान आदि विषयों में पढ़ने के लिए राय नहीं दी जाती। इसके कुछ कारण दिव्यांग का मित्र गौरव बताता है जो स्वयं दृष्टिहीन है-''मैंने स्नातक स्तर पर विज्ञान विषय में प्रवेश लेना चाहा, मुझे प्रवेश कनविनर ने समझाया कि तुम तो प्रयोग करने वाले उपकरणों को न देख सकोगे न उनसे प्रयोग कर सकोंगे। इससे तुम्हारा एक वर्श बेकार जायेगा, फिर मैंने बी.ए. मनोविज्ञान (ऑनर्स) में प्रवेश लिया परिणामस्वरूप मनोविज्ञान

विभाग की कनविनर डॉ. मालिनी ने मुझे समझाया कि ''यहाँ तो प्रैक्टिकल होता है लोगों के व्यवहार को देखा, मापा जाता है। तुम देख नहीं सकते इसलिए तुम्हारे लिए यह विषय लेना ठीक नहीं होगा और तुम्हारा एक साल खराब जायेगा।''16